शिक्षा से जीवन के टूटे पुलों को जोड़ती किताब

The School and Society : John Dewey

पल्लवी चतुर्वेदी

जॉन ड्युई का शिक्षा दर्शन
सामुदायिक जीवन के अनुभवों से रची शिक्षा व्यवस्था की रूपरेखा

जॉन ड्युई का शिक्षा दर्शन उन तीन व्याख्यानों के माध्यम से समझा जा सकता है जो उन्होंने अप्रैल, 1899 में university elementary school में पढ़ रहे छात्रों के अभिभावकों और इस स्कूल में रूचि रखने वाले अन्य लोगों की उपस्थिति में दिए। ये व्याख्यान आगे वर्णित विषयवस्तुओं के बारे में व्याख्याता के विचारों को श्रोताओं के समक्ष रखते हैं। ये हैं– स्कूल और सामाजिक प्रगति, स्कूल और बच्चे का जीवन, स्कूली जीवन के विभिन्न अंगों के मध्य सुसंगति का अभाव और University elementary स्कूल के तीन वर्ष।

प्रस्तुत लेख इन्हीं व्याख्यानों के विषय में लेखक की समझ का सार है। सं.

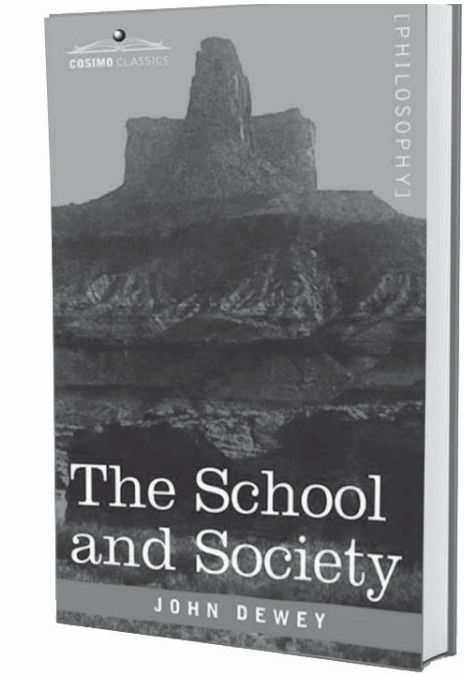

द स्कूल एंड सोसाइटी
जॉन ड्युई

यदि विश्व के बड़े शहरों में रहने वाले किसी आम इंसान से पूछा जाए कि आज की दुनिया की सबसे बड़ी समस्या क्या हैं तो शायद वो ज़िक्र करे पर्यावरण पर गहराते संकट का या बढ़ती असुरक्षा का या फिर शहरों में बढ़ती आबादी और आर्थिक दबावों और सतत चलने वाली प्रतिस्पर्धा के कारण होने वाली शारीरिक व मानसिक तकलीफों का। हममें से शायद कम ही लोग ऐसे होंगे, जिन्हें बढ़ती असमानता और करोड़ों लोगों की बदहाली को गम्भीरता से न लेने के खतरनाक परिणाम नज़र आते हों। इसके अलावा उससे भी कम वे लोग होंगे, जो असन्तुलित व्यक्तिवाद की जड़ें प्रारम्भिक शिक्षा व्यवस्था और उससे पनपे जीवन लक्ष्यों में देखते हों। ऐसे ही अनोखे व्यक्तियों में एक थे जॉन ड्युई, जिन्होंने पिछली सदी के प्रारम्भ में ही विश्व का ध्यान ऐसे विषयों की ओर दिलाया और एक बेहतर दुनिया के लिए ज़रूरी प्रगतिवादी शिक्षा की अवधारणा को प्रस्तुत किया, जो ज्ञान और कर्म के एकीकरण और शिक्षा के सामाजिक उद्देश्यों को केन्द्र में रखती है, क्योंकि ड्युई का मानना था कि जो शिक्षा हालात नहीं बदल सकती, वो सही अर्थों

में शिक्षा है ही नहीं। उनकी दृष्टि में विचार भी एक प्रकार के औज़ार हैं, जिनसे लोगों की समस्याएँ सुलझनी चाहिए अन्यथा उनका कोई महत्त्व नहीं है।

ड्युई के शिक्षा सम्बन्धी ये विचार उनके और विलियम जेम्स द्वारा प्रतिपादित Pragmatism पर आधारित थे। ये एक नया दार्शनिक विचार था, जो ज्ञान को आम लोगों के लिए उपयोगी बनाने की वकालत करता था और उसे विश्वविद्यालयों के वर्चस्व से मुक्त करने की बात भी करता था। ऐसा ज्ञान गूढ़ और अमूर्त नहीं हो सकता। उसे तो लोगों के लिए उपयोगी होना होगा, क्योंकि उपयोगी ज्ञान ही समाज के काम आ सकता है और समानतापरक शिक्षा का आधार बन सकता है।

इन्हीं विचारों के आलोक में लैब स्कूल की नींव पड़ी। सन 1896 में इसकी दूसरी पारी में 1917-20 के दौरान इसे न्यू स्कूल नाम दिया गया। इस स्कूल की स्थापना ड्युई ने अपने विचारों की वैधता सिद्ध करने के लिए की थी। इसे पहले एक शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान की तरह देखा जा रहा था, जिसे ड्युई ने एक demonstration स्कूल में बदल दिया, जहाँ बच्चों को सिर्फ ज्ञान प्राप्त ही नहीं करना था, बल्कि उसका उपयोग करना भी सीखना था।

ड्युई यहाँ जानकारी आधारित, सामाजिक निष्क्रियता और प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देने वाली परम्परागत शिक्षा प्रणाली की आलोचना करते हुए वास्तविक सामाजिक और आर्थिक क्रियाकलापों से रची–बसी शैक्षणिक व्यवस्था की व्यापक रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं

आज ऐसे ही स्कूल हमें देखने को मिलते हैं, जो डाइट का अभिन्न अंग हैं। हालाँकि, उनमें चलने वाले शैक्षिक कर्म को किसी प्रयोग या शोध की तरह ही देखा जाता है, न कि स्कूलों में सतत चलने वाली कक्षा–कक्ष प्रक्रियायों के रूप में। ज़ाहिर है, हमारी पूरी शिक्षा व्यवस्था को ड्युई के विचारों के साथ मूर्त्त रूप में परिणत करने के लिए डाइट को एक लम्बी यात्रा करनी होगी।

ड्युई का लैब स्कूल कुछ ऐसा था

कल्पना कीजिए एक ऐसे स्कूल की, जो कभी एक कारखाने जैसा लगता हो, कभी प्रयोगशाला, कभी संगोष्ठी का मंच और कभी घुमंतुओं के एक दल जैसा और जहाँ ये सब एक अद्भुत कर्म की तरह ना देखा जा रहा हो, बल्कि समाज के ताने-बाने से रचे एक शैक्षिक कर्म की तरह समझा जा रहा हो। यही था ड्युई का university elementary स्कूल या लैब स्कूल, जिसके सैद्धांतिक आधारों की व्याख्या ड्युई अपनी व्याख्यानमाला के ज़रिए करते हैं। ये व्याख्यान उन्होंने शिकागो विश्वविद्यालय में काम करते हुए लैब स्कूल के प्रयोग के लिए आवश्यक सहयोग राशि इकट्ठा करने के उद्देश्य से दिए थे, जिनको The school and society नामक इस पुस्तक में संकलित किया गया है।

ड्युई यहाँ जानकारी आधारित, सामाजिक निष्क्रियता और प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देने वाली परम्परागत शिक्षा प्रणाली की आलोचना करते हुए वास्तविक सामाजिक और आर्थिक क्रियाकलापों से रची–बसी शैक्षणिक व्यवस्था की व्यापक रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं। इस व्यवस्था में शैक्षिक कर्म का मतलब छात्रों को पंक्तियों में बैठाकर ज्ञान देना या अमूर्त्त सिद्धान्तों की व्याख्या करना नहीं है, बल्कि उसे विभिन्न प्रकार के जीवनोपयोगी क्रियाकलापों जैसे कपड़े सिलना, सूत, ऊन आदि से कपड़े तैयार करना, विभिन्न धातुओं से वस्तुओं को बनाना, लकड़ी का काम, कपड़े की रंगाई आदि में शामिल कर विषयों से जुड़ी अवधारणाओं को समझने के अवसर देना था। उदाहरण के लिए, खाना बनाने की प्रक्रिया के दौरान छात्रों को विभिन्न खाद्य पदार्थों में निहित

पोषक तत्वों, तापमान परिवर्तन से उन पर पड़ने वाले प्रभावों, तथा सभ्यताओं के विकास क्रम में विभिन्न समाजों द्वारा खान पान के तरीकों व रुचियों में आए परिवर्तनों को समझने के अवसर देना। इसी प्रकार, कपडा बुनने की प्रक्रिया को सीखने के दौरान, सूती, ऊनी या अन्य प्रकार के फैब्रिक के रेशों की विशेषताओं का अध्ययन करना और उसी के आधार पर यह समझ विकसित कर पाना की मानव सभ्यता के विकास क्रम में फैब्रिक के चयन को किन कारकों ने प्रभावित किया होगा। इस तरह की शैक्षिक प्रक्रियाओं के माध्यम से छात्र विज्ञान और सामाजिक अध्ययन की विभिन्न शाखाओं जैसे रसायनशास्त्र, भौगोलिक विज्ञान, अर्थशास्त्र और समाज शास्त्र आदि की ठोस समझ विकसित कर पाते हैं और इसी प्रक्रिया में विकसित होता है स्व-अनुशासन, चरित्र, दायित्व भाव, तथा व्यवस्था कायम करने की क्षमता।

ड्युई इन सबको भविष्य में अर्थोपार्जन के उद्देश्य से जोड़कर नहीं देखते, बल्कि मानव समाज द्वारा ज्ञान के उपयोग को बेहतर ढंग से समझने तथा मानवीय गुणों और मूल्यों के विकास से जोड़कर देखते हैं, क्योकि यही मूल्य इंसानी समाज की प्रगति को सुनिश्चित करते हैं और उनके बीच आपसी सहयोग की भावना का विकास करते हुए मानव जीवन को सार्थकता प्रदान करते हैं।

इसके साथ ही, ऐसी शिक्षा व्यवस्था समाज को बौद्धिक और कामगार वर्गों में विभाजित नहीं करती, बल्कि बौद्धिक और शारीरिक श्रम की परस्पर निर्भरता का विचार प्रस्तुत करती है, जिसमें श्रम को एक मशीनी प्रक्रिया की तरह नहीं बल्कि एक नैतिक कर्म के रूप में देखा जाता है और ऐसी शिक्षा की व्यवस्था करने वाला स्कूल छात्रों को सिर्फ़ कुछ पाठ पढ़ाने की ज़िम्मेदारी नहीं लेता, बल्कि उन्हें एक सक्रिय एवं वास्तविक सामुदायिक जीवन का अनुभव कराता है।

ड्युई का मानना था कि ऐसी शिक्षा, जिसकी प्रक्रियाओं में वास्तविक उद्देश्यों के लिए कुछ ना कुछ करना या बनाना शामिल है, अधिकांश वर्गों और रुचियों के लोगों को आकर्षित कर सकती है, क्योंकि अमूर्त्तता में अवस्थित बौद्धिक प्रक्रियाओं में रुचि रखने वाले वर्ग की संख्या बहुत ही सीमित है।

ड्युई का मानना था कि ऐसी शिक्षा, जिसकी प्रक्रियाओं में वास्तविक उद्देश्यों के लिए कुछ ना कुछ करना या बनाना शामिल है, अधिकांश वर्गों और रुचियों के लोगों को आकर्षित कर सकती है, क्योंकि अमूर्तता में अवस्थित बौद्धिक प्रक्रियाओं में रुचि रखने वाले वर्ग की संख्या बहुत ही सीमित है।

इसी सिलसिले में ड्युई, फ्रेडरिक फ्रोएबेल, जो किंडरगार्टन स्कूल पद्धति के प्रणेता रहे हैं, के विचारों और बच्चों की शिक्षा के सम्बन्ध में उनके द्वारा सुझाए गए सिद्धान्तों का हवाला देते हुए बच्चों की शुरुआती शिक्षा के दौरान स्कूल की भूमिका को परस्पर निर्भरता और सहयोगपूर्ण व्यवहार की नींव तैयार करने तक देखते हैं। साथ ही इस बात को भी रेखांकित करते हैं कि बच्चों की शिक्षा उनकी मूल प्रकृति, आवेगो और स्वाभाविक क्रियाओं में ही केन्द्रित होनी चाहिए। इसीलिए अब बच्चों के खेलों, गीतों और काल्पनिक जगत में चलने वाली उनकी बातचीत और इसी तरह के अन्य क्रियाकलापों के शैक्षिक महत्त्व को समझा जाने लगा है। इसी सन्दर्भ में फ्रोएबेल और ड्युई दोनों ही सृजनात्मक और उत्पादक कार्यों में उन्हें शामिल करने की पुरजोर वकालत करते हैं। इस तरह के कामों में बच्चों के योगदान को रोज़गार के लिए किए जाने वाले कामों से अलग करके देखने की ज़रुरत है, क्योंकि ये काम जीवन के कारोबार को चलाने के लिए नहीं, बल्कि

मानव जीवन को उसके सामुदायिक अर्थों में समझने और उसके प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण के निर्माण के लिए बेहद ज़रूरी हैं।

ड्युई इस स्कूल की शैक्षिक प्रक्रियाओं के माध्यम से प्रजातान्त्रिक मूल्यों से युक्त एक समाज की नीव निर्मित करने का प्रयास करते नज़र आते हैं, जिसमें शिक्षक की भूमिका में अधिकार, सत्ता और अनुशासन की बजाय मार्गदर्शन, सहयोग और प्रेरणा जैसे मूल्यों का विशेष महत्त्व है, क्योंकि ऐसे स्कूल में शिक्षक को विद्यार्थियों के साथ मिलकर ही पाठ्यचर्या बनानी होती है, स्कूल चलाने सम्बन्धी निर्णय लेने होते हैं और उन्हीं के साथ मिलकर विषय सम्बन्धी व अन्य समस्याओं के समाधान निकालने होते हैं। यह सतत भागीदारी ही एक समानतापरक समाज का आधार बनती है, जहाँ ज्ञान की सत्ता भी साझी हो। हालाँकि, सैद्धान्तिक रूप में इतनी सम्भावनाएँ खोलने वाला ये प्रयोग अपनी तीन साल की यात्रा के दौरान ही एक यूटोपियन विचार जैसा लगने लगा था, क्योंकि समस्या-समाधान आधारित और विद्यार्थियों की रुचियों के अनुसार चलने वाली ये शिक्षण व्यवस्था विद्यार्थियों और शिक्षकों दोनों के लिए चुनौती पूर्ण थी। अन्ततः इस प्रयोगधर्मी स्कूल में भी परम्परागत शिक्षण प्रणालियाँ वापस लौटने लगीं। तो क्या इससे ये नतीजा निकाला जाए कि ड्युई का समाजोपयोगी, उदारवादी और प्रगतिगामी शिक्षा का विचार ज़मीनी हकीक़त को बदलने में असफल रहा। या फिर यह कि ड्युई के इस शिक्षादर्शन ने विश्व के सामने उदारवादी और प्रजातान्त्रिक मूल्यों पर आधारित शिक्षा व्यवस्था का एक आदर्श रूप प्रस्तुत किया और साथ ही शिक्षा और शिक्षार्थी की एक गहरी समझ संसार को दी, जो तार्किक दृष्टि से सही लगती है। आज के भारत में ही आपको कुछ प्रजातान्त्रिक स्कूल मिल जाएँगे, जो ड्युई के शिक्षा दर्शन को वास्तविकता के धरातल पर उतारने की कोशिशों में लगे हैं।

हमारे देश में भी स्कूल शिक्षा में सुधार लाने के लिए तैयार किए गए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या के आधार पत्र, विशेषकर NCF 2005, ड्युई के शिक्षा दर्शन में निहित सामाजिक चेतना और जीवन के लिए और उससे जुड़ी शैक्षिक प्रक्रियाओं के महत्त्व को रेखांकित करते हैं। NCF 2005 की कई अनुशंसाओं में ड्युई के विचारों की स्पष्ट झलक मिलती है।

इसके साथ ही, ड्युई के इस शैक्षिक दर्शन ने, जो आधुनिक मनोविज्ञान के क्षेत्र में हुए अध्ययनों, उनसे उपजी समझ और हमारी दुनिया के भौतिक और सामाजिक पहलुओं की बेहतर समझ से विकसित विमर्श पर आधारित हैं, दुनियाभर में शिक्षा के क्षेत्र में हुए महत्त्वपूर्ण बदलावों को दिशा दी। हमारे देश में भी स्कूल शिक्षा में सुधार लाने के लिए तैयार किए गए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या के आधार पत्र, विशेषकर NCF 2005, ड्युई के शिक्षा दर्शन में निहित सामाजिक चेतना और जीवन के लिए और उससे जुड़ी शैक्षिक प्रक्रियाओं के महत्व को रेखांकित करते हैं। NCF 2005 की कई अनुशंसाओं में ड्युई के विचारों की स्पष्ट झलक मिलती है। उदाहरण के लिए, स्कूल में दी जाने वाली शिक्षा और बच्चों के वास्तविक जीवन के कार्यकलापों के बीच के फ़र्क को दूर करना, विश्वविद्यालयों को स्कूली शिक्षा से जोड़ने, स्कूली जीवन के शुरुआती वर्षों में बच्चों की अवलोकन क्षमता विकसित करने के लिए उनके जीवन के अनुभवों और उनके आसपास के जगत से प्राप्त सामग्री का शिक्षण प्रक्रियाओं में उपयोग करना, स्कूली शिक्षा में समझ और कौशल विकास पर ज़ोर देना, भाषा-शिक्षण के दौरान छात्रों को स्वतन्त्र और मौलिक चिन्तन व अभिव्यक्ति के मौके देना आदि।

ड्युई के व्याख्यानों का यह संग्रह न सिर्फ़ उनके विचारों को समझने में मदद करता है, बल्कि शिक्षा और जीवन के सामंजस्य पर

केन्द्रित आधुनिक, प्रगतिगामी विमर्श के धागों को भी खोलता है। शिक्षा के लिए काम कर रहे हर व्यक्ति के लिए पढ़ने योग्य कुछ बेहद अहम् पुस्तकों में से एक है।

पल्लवी चतुर्वेदी पेशे से शिक्षक हैं। आप अंग्रेजी साहित्य की अध्येता हैं। पिछले डेढ़ दशक से शिक्षण व प्रशिक्षण के कार्य में जुटी हुई हैं। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन भोपाल में अंग्रेजी भाषा की रिसोर्स पर्सन के रूप में कार्यरत हैं।
सम्पर्क : pallvi.chaturvedi@azimpremjifoundation.org